सिद्ध पूजन

रचनाकार
बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल'
देवलाली

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

sarvodayahinsa@gmail.com
9785999100
/Sarvodayaahimsa

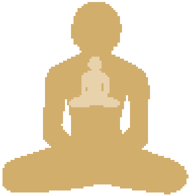

(हरिगीतिका)

निज वज्र पौरुष से प्रभो! अन्तर-कलुष सब हर लिये।
प्रांजल[1] प्रदेश-प्रदेश में, पीयूष निर्झर झर गये॥
सर्वोच्च हो अतएव बसते, लोक के उस शिखर रे!
तुम को हृदय में स्थाप, मणि-मुक्ता चरण को चूमते॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

1. शुद्ध

(वीरछन्द)

शुद्धातम-सा परिशुद्ध प्रभो! यह निर्मल नीर चरण लाया।
मैं पीड़ित निर्मम ममता से, अब इसका अंतिम दिन आया।।
तुम तो प्रभु अंतर्लीन हुए, तोड़े कृत्रिम सम्बन्ध सभी।
मेरे जीवन-धन तुमको पा, मेरी पहली अनुभूति जगी।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोदय अहिंसा
सर्व: सर्वत्र नन्दतु

मेरे चैतन्य-सदन में प्रभु! धू-धू क्रोधानल जलता है।
अज्ञान-अमा[2] के अंचल में, जो छिपकर पल-पल पलता है।।
प्रभु! जहाँ क्रोध का स्पर्श नहीं, तुम बसो मलय की महकों में।
मैं इसीलिए मलयज लाया, क्रोधासुर भागे पलकों में।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय
चन्दनं निर्वपीमीति स्वाहा।

सर्वोदय अहिंसा
सर्व: सर्वत्र नन्दतु

2. अमावस्या

अधिपति प्रभु! धवल भवन[3] के हो, और धवल तुम्हारा अन्तस्तल।
अंतर के क्षत सब विक्षत कर, उभरा स्वर्णिम सौंदर्य विमल।।
मैं महामान से क्षत-विक्षत, हूँ खंड-खंड लोकांत-विभो!
मेरे मिट्टी के जीवन में, प्रभु! अक्षत की गरिमा भर दो।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये
अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

3. सिद्धशिला

चैतन्य-सुरभि की पुष्पवाटिका, में विहार नित करते हो।
माया की छाया रंच नहीं, हर बिन्दु सुधा की पीते हो॥
निष्काम प्रवाहित हर हिलोर, क्या काम काम की ज्वाला से।
प्रत्येक प्रदेश प्रमत्त हुआ, पाताल-मधु-मधुशाला[1] से।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय
पुष्पं निर्वपीमीति स्वाहा।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

1. शुद्ध अन्तस्तत्त्व का आनंदभवन

यह क्षुधा देह का धर्म प्रभो! इसकी पहिचान कभी न हुई।
हर पल तन में ही तन्मयता, क्षुत्-तृष्णा अविरल पीन[2] हुई॥
आक्रमण क्षुधा का सह्य नहीं, अतएव लिये हैं व्यंजन ये।
सत्वर[3] तृष्णा को तोड़ प्रभो! लो, हम आनंद-भवन पहुँचे॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय
नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

2. पुष्ट
3. अविलम्ब

विज्ञान नगर के वैज्ञानिक, तेरी प्रयोग-शाला विस्मय।
कैवल्य-कला में उमड़ पड़ा, सम्पूर्ण विश्व का ही वैभव॥
पर तुम तो उससे अति विरक्त, नित निरखा करते निज निधियाँ।
अतएव प्रतीक प्रदीप लिये, मैं मना रहा दीपावलियाँ[4]॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय
दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

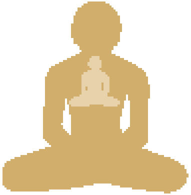

तेरा प्रासाद महकता प्रभु! अति दिव्य दशांगी[5] धूपों से।
अतएव निकट नहिं आ पाते, कर्मों के कीट-पतंग अरे!
यह धूप सुरभि-निर्झरणी, मेरा पर्यावरण[6] विशुद्ध हुआ।
छक गया योग-निद्रा[7] में प्रभु! सर्वांग अमी[8] है बरस रहा॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय
धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

5. दशधर्मों की
6. अंतरंग प्रदूषण
7. आनन्द-समाधि
8. अमृत

निज लीन परम स्वाधीन बसो, प्रभु! तुम सुरम्य शिव-नगरी में।
प्रतिपल बरसात गगन[9] से हो, रसपान करो शिव-गगरी में॥
ये सुरतरुओं के फल साक्षी, यह भव-संतति का अंतिम क्षण।
प्रभु! मेरे मंडप में आओ, है आज मुक्ति का उद्घाटन॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये
फलं निर्वपीमीति स्वाहा।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

9. शून्य चैतन्य

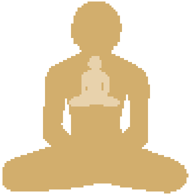

तेंरे विकीर्ण[10] गुण सारे प्रभु! मुक्ता-मोदक से सघन हुए।
अतएव रसास्वादन करते, रे! घनीभूत अनुभूति लिये॥
हे नाथ! मुझे भी अब प्रतिक्षण, निज अंतर-वैभव की मस्ती।
है आज अर्घ्य की सार्थकता, तेरी अस्ति मेरी बस्ती॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये
अर्घ्यं निर्वपीमीति स्वाहा।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

10 बिखरे हुए

जयमाला

(दोहा)

चिन्मय हो, चिद्रूप प्रभु! ज्ञाता मात्र चिदेश।
शोध-प्रबंध चिदात्म[1] के, स्रष्टा तुम ही एक॥

सर्वोदय अहिंसा
सर्व: सर्वत्र नन्दतु

1. आत्मा के शुद्धि-विधान की शोध

(रेखता)

जगाया तुमने कितनी बार! हुआ नहिं चिर-निद्रा का अन्त।
मदिर[2] सम्मोहन ममता का, अरे! बेचेत पड़ा मैं सन्त॥
घोर तम छाया चारों ओर, नहीं निज सत्ता की पहिचान।
निखिल जड़ता दिखती सप्राण, चेतना अपने से अनजान॥
ज्ञान की प्रतिपल उठे तरंग, झाँकता उसमें आतमराम।
अरे! आबाल सभी गोपाल, सुलभ सबको चिन्मय अभिराम॥

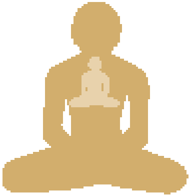

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

2. मादक

किन्तु पर सत्ता में प्रतिबद्ध, कीर-मर्कट-सी[3] गहल अनन्त।
अरे! पाकर खोया भगवान, न देखा मैंने कभी बसंत॥
नहीं देखा निज शाश्वत देव, रही क्षणिका पर्यय की प्रीति।
क्षम्य कैसे हों ये अपराध? प्रकृति की यही सनातन रीति॥
अतः जड़-कर्मों की जंजीर, पड़ी मेरे सर्वात्म प्रदेश।
और फिर नरक-निगोदों बीच, हुए सब निर्णय हे सर्वेश!

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

3. तोता और बंदर जैसी

घटा घन विपदा की बरसी, कि टूटी शंपा[4] मेरे शीश।
नरक में पारद-सा तन टूक, निगोदों मध्य अनंती मीच[5]।।
करें क्या स्वर्ग सुखों की बात, वहाँ की कैसी अद्भुत टेव!
अंत में बिलखे छह-छह मास, कहें हम कैसे उसको देव!
दशा चारों गति की दयनीय, दया का किन्तु न यहाँ विधान।
शरण जो अपराधी को दे, अरे! अपराधी वह भगवान।।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

4. बिजली
5. मृत्यु

"अरे! मिट्टी की काया बीच, महकता चिन्मय भिन्न अतीव।
शुभाशुभ की जड़ता तो दूर, पराया ज्ञान वहाँ परकीय।।
अहो 'चित्' परम अकर्तानाथ, अरे! वह निष्क्रिय तत्त्व विशेष।
अपरिमित अक्षय वैभव-कोष", सभी ज्ञानी का यह परिवेश[1] ।।
बताये मर्म अरे! यह कौन, तुम्हारे बिन वैदेही नाथ?
विधाता शिव-पथ के तुम एक, पड़ा मैं तस्कर दल के हाथ।।

सर्वोदय अहिंसा
सर्व: सर्वत्र नन्दतु

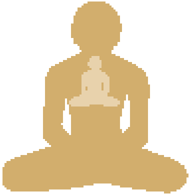

किया तुमने जीवन का शिल्प[2], खिरे सब मोह कर्म और गात[3]।
तुम्हारा पौरुष झंझावात[4], झड़ गये पीले-पीले पात॥
नहीं प्रज्ञा-आवर्तन[5] शेष, हुए सब आवागमन अशेष।
अरे प्रभु! चिर-समाधि में लीन, एक में बसते आप अनेक॥
तुम्हारा चित्-प्रकाश कैवल्य, कहें तुम ज्ञायक लोकालोक।
अहो! बस ज्ञान जहाँ हो लीन, वही है ज्ञेय, वही है भोग॥

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

2. सुन्दर रचना
3. शरीर 4. तूफान
5. ज्ञप्ति परिवर्तन

योग-चांचल्य[6] हुआ अवरुद्ध, सकल चैतन्य निकल निष्कंप।
अरे! ओ योग रहित योगीश! रहो यों काल अनंतानंत॥
जीव कारण-परमात्म त्रिकाल, वही है अंतस्तत्त्व अखंड।
तुम्हें प्रभु! रहा वही अवलंब, कार्य परमात्म हुए निर्बन्ध॥
अहो! निखरा कांचन चैतन्य, खिले सब आठों कमल[7] पुनीत।
अतीन्द्रिय सौख्य चिरंतन भोग, करो तुम धवल महल के बीच॥

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

6. आत्मप्रदेशों का कम्पन
7. आठ गुण

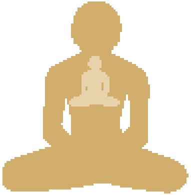

उछलता मेरा पौरुष आज, त्वरित टूटेंगे बंधन नाथ!
अरे! तेरी सुख-शय्या बीच, होगा मेरा प्रथम प्रभात।।
प्रभो! बीती विभावरी[8] आज, हुआ अरुणोदय शीतल छाँव।
झूमते शांति-लता के कुंज, चलें प्रभु! अब अपने उस गाँव।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये
जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

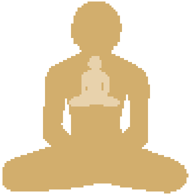

(दोहा)

चिर-विलास चिद्ब्रह्म में, चिर-निमग्न भगवंत।
द्रव्य[9]-भाव[10] स्तुति से प्रभो!, वंदन तुम्हें अनंत॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

सर्वोदय अहिंसा
सर्वः सर्वत्र नन्दतु

9. उत्कृष्ट भक्ति परिणाम
10. निज शुद्धात्म-संवेदन